केवल नामांकन के स्तर पर समावेशन पर्याप्त नहीं है

मधु कुशवाहा

लेख में *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* में विद्यालयों और संस्थानों में समावेशन के लिए क्या नीतिगत विचार प्रस्तुत किए गए हैं, और इन्हें लागू करने की मुख्य समस्याएँ क्या हैं, के बारे बताया गया है। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान की एक अध्यापिका ने विश्वास जताया कि क्षमतावान एवं संवेदनशील शिक्षक ही विद्यालयों व अन्य शिक्षण संस्थानों में समावेशन की संस्कृति के वाहक बन सकते हैं।

भारत सहित दुनिया की सभी शिक्षा व्यवस्थाएँ और प्रक्रियाएँ शत प्रतिशत समावेशी होने का दावा नहीं कर सकती हैं। इसकी दो वजहें हैं; पहली, समावेशन एक निरन्तर जारी रहने वाली प्रक्रिया है। जब हम एक स्तर पर या समूह के लिए समावेशन की माँगों को पूरा करते हैं तो शिक्षा सुविधाओं के प्रसार से नई सामाजिक पहचानों के साथ नए विद्यार्थियों की नई माँगों का आना स्वाभाविक है।

दूसरी, समावेशी शैक्षिक नीतियों को लागू करने की ज़िम्मेदारी जिन अधिकारियों, शिक्षकों पर होती है, वे सब उसी समाज के सदस्य होते हैं जो ग़ैर-समावेशी व्यवहारों को विभिन्न आधारों पर अभी तक जायज़ ठहराता आया है। इसलिए सभी में, और विशेषकर शिक्षकों में, समावेशन के सिद्धान्तों के प्रति सकारात्मक सोच बनाना और उनकी क्षमताओं का निर्माण करना, नीतियों को लागू करने की पहली शर्त बन जाता है।

भारत की स्कूली शिक्षा और उच्च शिक्षा के लगभग सभी आयोगों की रपटों में समावेशन की आवश्यकता और महत्त्व को रेखांकित किया गया है। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* में भी समावेशी शिक्षा पर बहुत ज़ोर है।

> "शिक्षा, सामाजिक न्याय और समानता प्राप्त करने का एकमात्र और सबसे प्रभावी साधन है। जहाँ समतामूलक और समावेशी शिक्षा न सिर्फ़ स्वयं में एक आवश्यक लक्ष्य है, बल्कि समतामूलक और समावेशी समाज निर्माण के लिए भी अनिवार्य क़दम है, जिसमें प्रत्येक नागरिक को सपने सँजोने, विकास करने और राष्ट्र हित में योगदान करने का अवसर उपलब्ध हो।... यह नीति इस बात की पुन: पुष्टि करती है कि स्कूल शिक्षा में पहुँच, सहभागिता और अधिगम परिणामों में सामाजिक श्रेणी के अन्तरालों को दूर करना सभी शिक्षा क्षेत्र विकास कार्यक्रमों का मुख्य लक्ष्य होगा।" *-राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, अध्याय 6, बिन्दु 6.1, पृष्ठ 38*

चित्र 1 : सहभागिता, सामाजिक अन्तरालों को खेलों के ज़रिए दूर करतीं शिक्षिका

नीति आगे कहती है, "शिक्षा प्रणाली से सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित वर्गों (एसईडीजी) के बाहर हो जाने से जुड़े बहुत सारे कारण विद्यालयी शिक्षा प्रणाली और उच्चतर शिक्षा प्रणाली में समान हैं। इसलिए, विद्यालयी शिक्षा और उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में समता, समानता और समावेश से जुड़ा दृष्टिकोण एक समान होना चाहिए। अतः उच्चतर शिक्षा में समता, समानता और समावेशन के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक नीतिगत पहलों को स्कूली शिक्षा के लिए भी देखा जाना चाहिए।" *-राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, अध्याय 14, बिन्दु 14.2, पृष्ठ 66*

अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम में समावेशन

समावेशी शैक्षिक नीतियों को लागू करने की कोई भी योजना तब तक सफल नहीं हो सकती, जब तक समावेशन के लिए शिक्षकों की क्षमता और अभिवृत्ति का निर्माण न किया जाए। इसीलिए वर्ष 2014 से लागू दो-वर्षीय सेवापूर्व अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम के पाठ्यक्रम में समावेशी शिक्षा का एक कोर्स जोड़ा गया है। इसका लक्ष्य है कि शिक्षक समावेशन के सम्प्रत्यय, सिद्धान्त और महत्त्व को न केवल समझें वरन् इसे अपने शिक्षण व्यवहार और अभ्यास का अभिन्न अंग बनाएँ।

मेरे विचार से अगर किसी शिक्षक ने अपनी शैक्षिक यात्रा में कभी समावेशित होने का अनुभव किया है तो वह बेहतर तरीक़े से समावेशन के सिद्धान्त को समझ सकता है, और व्यवहार में उतार सकता है। अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम अपने प्रशिक्षुओं को समावेशी शिक्षा की रणनीतियों को बेहतर तरीक़े से सिखा सकते हैं और उनमें समावेशन के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण बना सकते हैं। अपने शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान में समावेशन के लिए किए गए कुछ प्रयासों के बारे में बात करूँगी।

समावेशन की सही और गहरी समझ विकसित करना

समावेशन के कई आयाम हैं। लेकिन समावेशन को विद्यार्थियों समेत ज़्यादातर लोग केवल नामांकन के सन्दर्भ में समझते हैं। उनके अनुसार, नामांकन में वरीयता दे देने से समावेशन का लक्ष्य पूरा हो जाता है, और विद्यालय में सफलता-असफलता की ज़िम्मेदारी विद्यार्थी की मान ली जाती है। यह समझ अकादमिक सफलता-असफलता को प्रयास, मेहनत और बुद्धि जैसे निहायत व्यक्तिगत कारकों तक सीमित करती है और इनके पीछे के सामाजिक-संरचनात्मक कारकों, सुविधाओं व बाधाओं को नहीं देख पाती है। दुर्भाग्य से, समावेशन का सतही दृष्टिकोण भारतीय समाज में काफ़ी व्यापक और प्रभावी तौर पर प्रचलित है।

> **सही अर्थों में समावेशन, भाषागत, पाठ्यक्रम सम्बन्धी, शिक्षण सामग्री, सीखने व मूल्यांकन के तौर-तरीक़ों, और विद्यालय के रोज़मर्रा के जीवन में समायोजन, अनुकूलन और बदलाव की माँग करता है।**

समावेशी नामांकन, समावेशन की ओर उठाया गया पहला क़दम है। सही अर्थों में समावेशन, भाषागत, पाठ्यक्रम सम्बन्धी, शिक्षण सामग्री, सीखने व मूल्यांकन के तौर-तरीक़ों, और विद्यालय के रोज़मर्रा के जीवन में समायोजन, अनुकूलन और बदलाव की माँग करता है।

अध्यापकों को समावेशन के व्यापक और सही अर्थ से परिचित कराने की ज़िम्मेदारी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों की है। अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम में प्रवेश लेने वाले प्रशिक्षु अलग-अलग शैक्षिक पृष्ठभूमि के होते हैं। लगभग सभी इस बात में यक़ीन करते हैं कि प्रवेश में आरक्षण ही समावेशन है, और अकादमिक असफलता व्यक्तिगत वजहों से है। ऐसे में, प्रशिक्षुओं को यह बात समझाना किसी चुनौती से कम नहीं है कि विद्यार्थी की विद्यालय में मिलने वाली सफलता-असफलता में सामाजिक-संरचनात्मक कारकों की निर्णायक भूमिका होती है। किसी भी विद्यार्थी की जातिगत, जेंडर और वर्गीय इंटरसेक्शनल पहचान उसके लिए विद्यालय में सुविधाओं या वंचनाओं की एक संरचना बना देती है। यह संरचना विद्यालय में सफल होने या फ़ेल हो जाने के लिए ज़िम्मेदार है। विद्यालय में सफलता का सीधा सम्बन्ध केवल विद्यार्थियों की जन्मजात बौद्धिक क्षमताओं से नहीं होता।

समावेशन का सही मतलब समझाने के लिए कक्षा में विद्यार्थियों की व्यक्तिगत शैक्षिक यात्रा को साझा करना एक कारगर रणनीति है। इसके लिए कोर्स की शुरुआत में ही मैं विद्यार्थियों को उनकी व्यक्तिगत शैक्षणिक यात्रा का दस्तावेज़ीकरण करने का कार्य देती हूँ, और कुछ बिन्दुओं पर सोचने व लिखने को कहती हूँ। जैसे– उन्होंने कहाँ से पढ़ाई की; किस क़िस्म के स्कूल में गए; उन्हें अपनी पढ़ाई में कितना पारिवारिक सहयोग मिला; वो उच्च शिक्षा में क्या पढ़ना चाहते थे; जो कोर्स या संस्थान वो चाहते थे क्या उसमें पढ़ पाए; क्या उन्हें शिक्षा प्राप्त करने में किसी क़िस्म की दिक़्क़तें आईं; आदि। यदि इन सवालों के जवाब 'हाँ' हैं तो उन वजहों या कारकों के बारे में लिखें जिन्होंने इसे सम्भव बनाया। इसी तरह, अगर इन सवालों के जवाब 'नहीं' हैं तब भी उन कारकों या वजहों की पहचान करें जो इसके लिए ज़िम्मेदार रही हैं। इसके बाद, मैं उनके लिखित कार्य पर परिचर्चा आयोजित करती हूँ, और उनके ही व्यक्तिगत शैक्षिक अनुभवों के आधार पर स्कूली सफलता-असफलता हेतु ज़िम्मेदार सामाजिक-संरचनात्मक कारकों की पहचान की जाती है। परिचर्चा से विद्यार्थियों को जेंडर पहचान और शैक्षिक अवसर, हिन्दी भाषी और विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों का शिक्षा क्षेत्र में सफलता पाने का संघर्ष, वर्गीय स्थिति और अँग्रेज़ी माध्यम में स्कूली व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पाने के अवसर के बीच सम्बन्ध फ़ौरन समझ आ जाते हैं।

इस तरह की परिचर्चा विद्यार्थियों में यह समझ विकसित करने में सहायक होती है कि आरक्षण द्वारा कुछ हद तक समावेशी नामांकन सुनिश्चित करने के बावजूद विद्यालय या संस्थान में पाठ्यक्रम व भाषागत समायोजन, और संरचनात्मक सुविधाओं (रैम्प, शौचालय, ब्रेल प्रिंटर, बोलकर पढ़ने वाले कम्प्यूटर प्रोग्राम, आदि) में प्रशिक्षण की ज़रूरत होती है, ताकि सभी विद्यार्थी शैक्षिक प्रक्रियाओं में समान भागीदारी कर पाएँ।

भाषागत समावेशन

भारत में अँग्रेज़ी भाषा का शिक्षा में वर्चस्व निर्विवाद है। पाठ्य सामग्री, पुस्तकों की उपलब्धता और कक्षा प्रक्रिया में अँग्रेज़ी भाषा में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को भागीदारी के अवसर ज़्यादा उपलब्ध हैं। ग़ैर-अँग्रेज़ी भाषी विद्यार्थी इससे काफ़ी भयभीत रहते हैं। अनुदेशन की भाषा के रूप में हिन्दी और अँग्रेज़ी, दोनों मान्य हैं, लेकिन स्तरीय पाठ्य सामग्री, सन्दर्भ पुस्तकें, आदि ज़्यादातर अँग्रेज़ी में ही उपलब्ध हैं। इसलिए हिन्दी माध्यम के विद्यार्थी ख़ुद को बहिष्कृत समझते हैं और पढ़ने की प्रक्रिया में लगातार विषय वस्तु और अँग्रेज़ी भाषा, दोनों से जूझते रहते हैं। अपने कोर्स में, जब मैंने उन्हें हिन्दी में अनूदित कुछ पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराई तो उन्हें सुखद आश्चर्य हुआ और कक्षा में उनकी भागीदारी बढ़ी। यह मेरे द्वारा अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के 'अनुवाद सम्पदा' कार्यक्रम के साथ जुड़ने से सम्भव हुआ। यह कार्यक्रम शिक्षा पर हिन्दी में लिखी गई व अनुवादित सामग्री की उपलब्धता एक बड़ा ऑनलाइन स्रोत है जिसका प्रयोग विद्यार्थियों के भाषाई बहिष्करण को कम करके उनके समावेशन को बढ़ाता है।

विद्यालय के रोज़मर्रा के जीवन में समावेशन

विशेष शारीरिक आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की नज़र से देखें तो शैक्षिक संस्थान, स्कूल उनके लिए एक चुनौतीपूर्ण जगह है। जब हम विशेष शारीरिक आवश्यकता की बात करते हैं तो हमारे ज़ेहन में सबसे पहले शारीरिक रूप से अक्षम विद्यार्थी ही आते हैं। सामान्य तौर पर, हम लड़कियों को इस श्रेणी में नहीं रखते हैं। उनकी माहवारी सम्बन्धी जैवशारीरिक विशेष आवश्यकता की तरफ़ योजनाकारों, शिक्षा अधिकारियों, शिक्षकों का ध्यान ही नहीं जाता है।

समाज में प्रचलित यह धारणा काफ़ी हानिकारक है कि एक लड़की या महिला को अपनी माहवारी का प्रबन्धन 'चुपचाप' और व्यक्तिगत तौर पर करना चाहिए। इस महत्त्वपूर्ण मुद्दे पर न तो सार्वजनिक विमर्श की माँग होती है न ही विद्यालय में माहवारी प्रबन्धन के लिए सुविधाओं की माँग की जाती है।

माहवारी के बारे में अपर्याप्त स्वास्थ्य शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य का एक वैश्विक मुद्दा है। माहवारी का मुद्दा इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह या तो कई मानव अधिकारों के सम्बन्ध में हमारी धारणा को सुगम बनाता है या बाधित करता है।

मेंसट्रूएटर्स (मुख्यतौर पर, लड़कियाँ व महिलाएँ और अन्य नॉन बाइनरी ट्रांस लोग भी) के लिए विद्यालय और कार्यस्थल पर कुछ विशेष सुविधाएँ आवश्यक हैं। इनका अभाव विद्यालय या शिक्षा संस्थानों में उनके समावेशन को प्रभावित करता है। लड़कियों की शिक्षा के अवसर को नकारात्मक रूप से प्रभावित करने के बावजूद विद्यालयी शिक्षा और अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम से यह मुद्दा ग़ायब है। प्रशिक्षु अध्यापिकाएँ-अध्यापक, जो शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान में इस चुप्पी की संस्कृति के तहत दीक्षित होते हैं, ख़ुद शिक्षक बनने पर इसी संस्कृति को आगे बढ़ाते हैं।

मैं माहवारी से सम्बन्धित बातचीत को 'सामान्य' (नॉर्मलाइज़) करना चाहती थी ताकि नए मेंसट्रूएटर्स एक 'सकारात्मक स्व' के साथ बड़े हों, न कि इस भावना के साथ कि माहवारी की वजह से उनका शरीर अपवित्रता या अशुद्धता का स्रोत है। एक अध्ययन के अनुसार, भारत में केवल 4 शिक्षा बोर्डों की पाठ्य पुस्तकों में माहवारी सम्बन्धी पाठ दिए गए हैं, और उनमें से केवल दो में ही माहवारी से जुड़ी मिथ्या धारणाओं पर अंश हैं (Kushwaha & Maurya, 2017)। इस अध्ययन में विद्यार्थियों से पता चला कि पाठ्य पुस्तक में माहवारी पर पाठ होने के बाद भी अध्यापिकाएँ-अध्यापक इसे पढ़ाने से हिचकिचाते हैं। वे कहते हैं कि इस पाठ को घर में ख़ुद से पढ़ लेना। ऐसी स्थिति में मुझे लगा कि हमें ऐसे शिक्षकों को तैयार करना ज़रूरी है जो इस विषय पर खुलकर बात कर सकें, और भविष्य में अपने युवा विद्यार्थियों के लिए एक सपोर्ट बनें।

मेरी कोशिश यह रहती है कि हम माहवारी उत्पाद प्रदान करने का काम गुपचुप तरीक़े से न करें। यथा– मैं उनसे कहती हूँ कि माहवारी उत्पाद की आवश्यकता होने पर स्पष्ट आवाज़ में माँगें, बहुत धीमे से कान में न कहें। साथ ही, अगर कक्षा में पुरुष शोधार्थी हैं तो मैं सायास उनसे ही कहती हूँ कि इन्हें सेनेटरी पैड दें। प्रशिक्षु अध्यापिकाएँ-अध्यापक माहवारी से जुड़े मुद्दों पर खुलकर चर्चा करते हैं, और उनका विश्वास है कि वे भविष्य में युवा विद्यार्थियों से इस मुद्दे पर बात करने और उन्हें सहायता देने के लिए तैयार हैं।

कुछ अनुभवों के माध्यम से मैंने उन रणनीतियों या प्रयासों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है जिनके द्वारा अध्यापक शिक्षा में समावेशी व्यवहारों को अपनाकर, मैं यह उम्मीद करती हूँ कि भावी अध्यापिकाएँ-अध्यापक अपनी कक्षाओं, विद्यालयों में इन विमर्शों को आगे बढ़ाएँगे।

सन्दर्भ

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_Final_English_0.pdf

Kushwaha, M. & Maurya, A. (2017) 'Menstruation and Textbook.' *International Refereed Journal of Reviews and Research.* Vol. 5, Issue 5, September 2017 https://www.irjrr.com/research/index.php/vol–5–issue–5–september–2017

मधु कुशवाहा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के शिक्षा संकाय में पिछले 25 वर्षों से अध्यापनरत हैं। इन्होंने शिक्षा के सामाजिक सन्दर्भ और शिक्षा में जेंडर के मुद्दों को अपने अध्यापन एवं शोध का विषय बनाया है।

सम्पर्क : mts.kushwaha@gmail.com